भारतीय इतिहास के स्रोतों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

महेन्द्र कुमार सैनी व्याख्याता इतिहास बानसूर पी.जी. कॉलेज बानसुर अलवर

परिचय

भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। परन्तु दुर्भाग्यवश हमें अपने प्राचीन इतिहास के पुनर्निर्माण के लिये उपयोगी सामग्री बहुत कम मिलती है। प्राचीन भारतीय साहित्य में ऐसे ग्रन्थों का प्रायः अभाव–सा है जिन्हें आधुनिक परिभाषा में इतिहासकी संज्ञा दी जाती है। यह भी सत्य है कि हमारे यहाँ हेरोडोटस, अथवा लिवी जैसे इतिहास–लेखक नहीं उत्पन्न हुए जैसा कि यूनान, रोम आदि देशों में हुए। कतिपय पाश्चात्य विद्वानों नेयह आरोपित किया कि प्राचीन भारतीयों में इतिहास–बुद्धि का अभाव था। लोएस डिकिंग्सन (Lowes Dikinson) के अनुसार हिन्दू इतिहासकार नहीं थे। भारत में मनुष्य प्रकृति के समक्ष अपने को तुच्छ और असमर्थ पाते है। फलस्वरूप उसमें नगण्यता तथा जीवन में नीरसता जन्म लेती है, उसे जीवन की अनुभूति एक भयानक दुःस्वप्न के रूप में होती है और दुःस्वप्न का कोई इतिहास नहीं होता है। विन्टर की मान्यता है कि भारतीयों ने मिथक, आध्यान तथा इतिहास में कभी भी स्पष्ट विभेद नहीं किया और भारत में इतिहास रचना काव्य रचना से ऊपर नहीं उठ सकी। मैकडॉनल्ड के अनुसार भारतीय साहित्य का दुर्बल पक्ष इतिहास है जिसका यहाँ अस्तित्व ही नहीं था। इसी विचारधारा का समर्थन एलफिन्स्टन, फ्लीट, मैक्समूलर, बी. ए. स्मिथ जैसे विद्वानों ने भी किया है। 11वीं शती के मुस्लिम लेखक अल्वरुनी इससे मिलता–जुलता विचार व्यक्त करते हुए लिखता है– हिन्दू लोग घटनाओं के ऐतिहासिक क्रम की ओर बहुत अधिक ध्यान नहीं देते। घटनाओं के तिथि क्रमानुसार वर्णन करने में वे बड़ी लापरवाही बरतते है।

किन्तु भारतीयों के इतिहास विषयक ज्ञान पर पाश्चात्य विद्वानों द्वारा लगाया गया उपरोक्त आरोप सत्य से परे है। वास्तविकता यह है कि प्राचीन भारतीयों ने इतिहास को उस दृष्टि से नहीं देखा जिससे कि आज के विद्वान् देखते हैं। उनका दृष्टिकोण पूर्णतया धर्मपरक था। उनकी दृष्टि में इतिहास साम्राज्यों अथवा सम्राटों के उत्थान अथवा पतन की गाथा न होकर उन समस्त मूल्यों का संकलन–मात्र था जिनके ऊपर मानव जीवन आधारित है।

तथापि इसका अर्थ यह नहीं है कि प्राचीन भारतीयों में ऐतिहासिक चेतना का भी अभाव था। प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यहाँ के निवासियों में अति प्राचीन काल से ही इतिहास बुद्धि विद्यमान रही। वैदिक साहित्य, बौद्ध तथा जैन ग्रन्थों में अत्यन्त सावधानीपूर्वक सुरक्षित आचार्यों की सूची (वंश) से यह बात स्पष्ट हो जाती है। वंश के अतिरिक्त गाथा तथा नाराशंसी साहित्य, जो राजाओं तथा ऋषियों के स्तुतिपरक गीत है, से भी सूचित होता है कि वैदिक युग में इतिहास लेखन की परम्परा विद्यमान थी। इसके अतिरिक्त इतिहास तथा पुराण नाम से भी अनेक रचनायें प्रचलित थी। इन्हें पञ्चम वेद कहा गया है। सातवीं शती के चीनी यात्री हेनसांग ने लिखा है कि भारत के प्रत्येक प्रान्त में राजाओं का विवरण लिखने के लिये कर्मचारी नियुक्त किये गये थे। कल्हण के विवरण से पता चलता है कि प्राचीन भारतीय विलुप्त तथा विस्मृत इतिहास को पुनरुज्जीवित करने की कुछ आधुनिक विधियों से भी परिचित थे। वह लिखता है– वही गुणवान् कवि प्रशंसा का अधिकारी है जो राग–द्वेष से मुक्त होकर एकमात्र तथ्यों के निरूपण में ही अपनी भाषा का प्रयोग करता है। वह हमें बताता है कि इतिहासकार का धर्म मात्र ज्ञात घटनाओं में नई घटनाओं को जोड़ना नहीं होता। अपितु सच्चा इतिहासकार प्राचीन अभिलेखों तथा सिक्कों का अध्ययन करके विलुप्त शासकों तथा उनकी विजयों की पुनः खोज करता है। कल्हण का यह

कथन भारतीयों में इतिहास बुद्धि का सवल प्रमाण प्रस्तुत करता है। इस प्रकार यदि हम सावधानीपूर्वक अपने विशाल साहित्य की छानबीन करें तो उसमें हमें अपने इतिहास के पुनर्निर्माणार्थ अनेक महत्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध होगी। साहित्यिक **ग्रंथ** के साथ–साथ भारत में समय–समय पर विदेशों से आने वाले यात्रियों के भ्रमण वृत्तान्त भी इतिहास विषयक अनेक उपयोगी **सामग्रियों** प्रदान करते हैं। इधर पुरातत्ववेत्ताओं ने अतीत के खण्डहरों से अनेक ऐसी वस्तुएँ खोज निकाली है जो हमें प्राचीन इतिहास–सम्बन्धी बहुमूल्य सूचनाएँ प्रदान करती हैं। अतः हम सुविधा के लिये भारतीय इतिहास जानने के साधनों को तीन शीर्षकों में रख सकते

(1) साहित्यिक साक्ष्य

(2.) विदेशी यात्रियों का वर्णन

(3) पुरातत्व–सम्वन्धी साक्ष्य।

यहाँ हम प्रत्येक का अलग–अलग विवेचन करेंगे–

साहित्यिक साक्ष्य

इस साक्ष्य के अन्तर्गत साहित्यिक ग्रन्थों से प्राप्त ऐतिहासिक सामग्रियों का अध्ययन किया जाता है। हमारा साहित्य दो प्रकार का है– (1) धार्मिक साहित्य, (2) लौकिक साहित्य।
धार्मिक साहित्य में ब्राह्मण तथा ब्राह्मणेतर ग्रन्थों की चर्चा की जा सकती है। ब्राह्मण ग्रन्थों में वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, पुराण तथा स्मृति **ग्रंथ** आते हैं, जबकि ब्राह्मणेतर ग्रन्थों में बौद्ध तथा जैन साहित्यों से सम्बन्धित रचनाओं का उल्लेख किया जा सकता है। इसी प्रकार लौकिक साहित्य में ऐतिहासिक ग्रंथों, जीवनियाँ, कल्पना–प्रधान तथा घरेलू साहित्य का वर्णन किया जाता है। इनका अलग–अलग विवरण इस प्रकार है–

वेद

ब्राह्मण साहित्य

वेद भारत के सर्वप्राचीन धर्म ग्रन्थ है जिनका संकलनकर्त्ता महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास को माना जाता है। भारतीय परम्परा वेदों को नित्य तथा अपौरुषेय मानती है। वैदिक युग की सांस्कृतिक दशा के ज्ञान का एकमात्र स्रोत होने के कारण वेदों का ऐतिहासिक महत्व बहुत अधिक है। प्राचीन काल के अध्ययन के लिये रोचक समस्त सामग्री हमें प्रचुर रूप में वेदों से उपलब्ध हो जाती है। वेदों की संख्या चार हैं–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद। इनमें ऋग्वेद न केवल भारतीय आर्यों की अपितु समस्त आर्य जाति की **प्राचीनतम** रचना है। इस प्रकार यह भारत तथा भारतेतर प्रदेशों के आर्यों के इतिहास, भाषा, धर्म एवं उनकी सामान्य संस्कृति पर प्रकाश डालता है। विद्वानों के अनुसार आर्यों ने इसको रचना पंजाब में किया था जब वे अफगानिस्तान से लेकर गंगा–यमुना के प्रदेश तक हो फैले थे। इनमें दस मण्डल तथा 1028 **सूक्त** हैं। ऋग्वेद का अधिकांश भाग देव–स्तोत्रों में भरा हुआ है और इस प्रकार उसमें ठोस ऐतिहासिक सामग्री बहुत कम मिलती हैं। परन्तु इसके कुछ मन्त्र ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख करते हैं। जैसे, एक स्थान पर दस राजाओं के युद्ध (दाशराज्ञ) का वर्णन आया है जो भरत कबीले के राजा सुदास के साथ हुआ था। यह ऋग्वैदिक काल को एकमात्र महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना है। भरत जन का

नेता सुदास था जिसके पुरोहित वशिष्ठ थे। इनके विरुद्ध दस राजाओं का एक संघ था जिसके पुरोहित विश्वामित्र थे। सुदास ने रावी नदी के तट पर दस राजाओं के संघ को परास्त किया और इस प्रकार वह ऋग्वैदिक भारत का चक्रवर्ती शासक बन बैठा।

सामवेद तथा यजुर्वेद में किसी भी विशिष्ट ऐतिहासिक घटना का वर्णन नहीं मिलता। साम का शाब्दिक अर्थ है गान। इसमें मुख्यतः यज्ञों के अवसर पर गाये जाने वाले मन्त्रों का संग्रह है। इसे भारतीय संगीत का मूल कहा जा सकता है। यजुर्वेद में यज्ञों के नियमों एवं विधि–विधानों का उल्लेख मिलता है ऐतिहासिक दृष्टि से अथर्ववेद का महत्व इस बात में है कि इसमें सामान्य मनुष्यों के विचारों तथा अंधविश्वासों का विवरण मिलता है। इनमें कुल 731 मन्त्र तथा लगभग 6000 श्लोक है। इसके कुछ मन्त्र ऋग्वैदिक मन्त्रों से भी प्राचीनतर है। पृथिवीसूक्त इसको प्रतिनिधि सूक्त माना जाता है। इसमें मानव जीवन के सभी पक्षों–गृह निर्माण, कृषि की उन्नति, व्यापारिक मार्गों का गाहन, रोग निवारण, समन्वय, विवाह तथा प्रणय–गीतों, राजभक्ति, राजा का चुनाव, बहुत सी वनस्पतियों तथा औषधियों आदि का विवरण दिया गया है। कुछ मन्त्रों में जादू–टोने का भी वर्णन है जो इस वात का सूचक है कि इस समय तक आर्य–अनार्य संस्कृतियों का समन्वय हो रहा था तथा आर्यों ने अनार्यों के कई सामाजिक एवं धार्मिक रीति रिवाजों एवं विश्वासों को ग्रहण कर लिया था। अथर्ववेद में परीक्षित को कुरुओं का राजा कहा गया है तथा कुरु देश की समृद्धि का अच्छा चित्रण मिलता है। इन चार वेदों को सहिता कहा जाता है।

ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद्

संहिता के पश्चात् ब्राह्मणों, आरण्यकों तथा उपनिषदों का स्थान है। इनसे उत्तर वैदिक कालीन समाज तथा संस्कृति के विषय में अच्छा ज्ञान प्राप्त होता है। ब्राह्मण ग्रन्थ वैदिक संहिताओं की व्याख्या करने के लिए गद्य में लिखे गये हैं। प्रत्येक संहिता के लिये अलग–अलग ब्राह्मण ग्रन्थ हैं जैसे ऋग्वेद के लिये ऐतरेय तथा कौषीतकी, यजुर्वेद के लिये तैत्तिरीय तथा शतपथ, सामवेद के लिये पंचविश, अथर्ववेद के लिये गोपथ आदि। इन ग्रन्थों से हमें परीक्षित के बाद और बिम्बिसार के पूर्व की घटनाओं का ज्ञान प्राप्त होता है। ऐतरेय, शतपथ, तैत्तिरीय, पंचविश आदि प्राचीन ब्राह्मण ग्रन्थों में अनेक ऐतिहासिक तथ्य मिलते हैं। ऐतरेय में राज्याभिषेक के नियम तथा कुछ प्राचीन अभिषिक्त राजाओं के नाम दिये गये, हैं शतपथ में गन्धार, शल्य, कैकय, कुरु, पंचाल, कोसल, विदेह आदि के राजाओं का उल्लेख मिलता है। प्राचीन इतिहास के साधन के रूप में वैदिक साहित्य में ऋग्वेद के बाद शतपथ ब्राह्मण का स्थान है। कर्मकाण्डों के अतिरिक्त इसमें सामाजिक विषयों का भी वर्णन है। इसी प्रकार आरण्यक तथा उपनिषदों में भी कुछ ऐतिहासिक तथ्य प्राप्त होते हैं, यद्यपि ये मुख्यतः दार्शनिक ग्रंथ हैं जिनका ध्येय ज्ञान की खोज करना है। इनमें हम भारतीय चिंतन की चरम परिणति पाते है।

वेदांग तथा सूत्र

वेदों को भली–भौति समझने के लिये छः वेदांगों की रचना की गयी शिक्षा, ज्योतिष, कल्प, व्याकरण, निरुक्त तथा छन्द ये वेदों के शुद्ध उच्चारण तथा यज्ञादि करने में सहायक थे। इसी प्रकार वैदिक साहित्य को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये सूत्र साहित्य का प्रणयन किया गया। श्रौत, गृह्या तथा धर्मसूत्रों के अध्ययन से हम यज्ञीय विधि–विधानों, कर्मकाण्डों तथा राजनीति, विधि एवं व्यवहार से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण बाते ज्ञात करते हैं।

ऋग्वेद से लेकर सूत्रों तक के सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय का काल ईसा पूर्व 2000 से लेकर 500 के लगभग तक सामान्य तौर से स्वीकार किया जा सकता है।

महाकाव्य

वैदिक साहित्य के बाद भारतीय साहित्य में रामायण और महाभारत नामक दो महाकाव्यों का समय आता है। मूलतः इन ग्रन्थों की रचना ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में हुई थी तथा इनका वर्तमान स्वरूप क्रमश दूसरी एवं चौथी शताब्दी ईस्वी के लगभग निर्मित हुआ था। भारत के सम्पूर्ण धार्मिक साहित्य में इन दोनों ही महाकाव्यों का अत्यन्त आदरणीय स्थान है। इनके अध्ययन से हमें प्राचीन हिन्दू संस्कृति के विविध पक्षों का सुन्दर ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इन महाकाव्यों द्वारा प्रतिपादित्त आदर्श तथा मूल्य सार्वभौम मान्यता रखते हैं। रामायण हमारा आदि–काव्य है जिसकी रचना महर्षि वाल्मीकि ने की थी। इससे हमें हिन्दुओं तथा यवनों और शकों के संघर्ष का विवरण प्राप्त होता है। इसमें यवन– देश तथा शकों का नगर, कुरु तथा मंद्र देश और हिमालय के बीच स्थित बताया गया है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि उन **दिनों** यूनानी तथा **सीथियन** लोग पंजाब के कुछ भागों में बसे हुये थे। महाभारत की रचना वेदव्यास ने की थी। इसमें भी शक, यवन, पारसीक, हूण आदि जातियों का उल्लेख मिलता है। इससे प्राचीन भारतवर्ष की सामाजिक, धार्मिक तथा राजनीतिक दशा का परिचय मिलता है। राजनीति तथा शासन के विषय में तो यह ग्रन्थ बहुमूल्य सामग्रियों का भण्डार है। महाभारत में यह कहा गया है कि धर्म अर्थ, काम तथा मोक्ष के विषय में जो कुछ भी इसमें है, वह अन्यत्र कहीं नहीं है। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से इन ग्रन्थों का विशेष महत्व नहीं है क्योकि इनमें वर्णित कथाओं में कल्पना का मिश्रण अधिक है। महाकाव्यों में जिस समाज और संस्कृति का चित्रण है उसका उपयोग उत्तरबैदिक काल के अध्ययन के लिये किया जा सकता है। पुराण

भारतीय ऐतिहासिक कथाओं का सबसे अच्छा क्रमबद्ध विवरण पुराणों में मिलता है। पुराणों के रचयिता लोमहर्ष अथवा उनके पुत्र उग्रश्रवा माने जाते हैं। इनकी संख्या 18 है। अधिकांश पुराणों की रचना तीसरी–चौथी शताब्दी ईस्वी में की गयी थी। सर्वप्रथम पाजिटर नामक विद्वान् ने इनके ऐतिहासिक महत्व की ओर विद्वानों का ध्यान आकृष्ट किया गया था। अमरकोश में पुराणों के पाँच विषय वताये गये हैं

(1) सर्ग अर्थात् जगत् की सृष्टि, (2) प्रतिसर्ग अर्थात् प्रलय के बाद जगत् की पुनः सृष्टि, (3) वंश अर्थात् ऋषिय तथा देवताओं की वंशावली, (4) मन्वन्तर अर्थात् महायुग और (5) वंशानुचरित अर्थात् प्राचीन राजकुलों का इतिहास।

इनमें ऐतिहासिक दृष्टि से वंशानुचरित का विशेष महत्त्व है। अठारह पुराणों से केवल पाँच में (मत्य, वायु, विष्णु, ब्रह्माण्ड, भागवत) ही राजाओं की वंशावली पायी जाती है। इनमें मत्स्य पुराण सबसे अधिक प्राचीन एवं प्रामाणिक है। पुराणों की भविष्य शैली में कलियुग के राजाओं की तालिकायें दी गयी है। इनके साथ शैशुनाग, नन्द, मौर्य, शुङ्ग, कण्व, आन्ध्र तथा गुप्त वंशों की वंशावलियां भी मिलती है। मौर्यवंश के लिये विष्णु पुराण तथा आन्ध्र (सातवाहन) वंश के लिये मूल्य प्राण महत्व के है। इसी प्रकार, वायु पुराण में गुप्तवंश की साम्राज्य सीमा का वर्णन तथा गुप्तों की शासन पद्धति का भी कुछ विवरण प्राप्त होता है। सामाजिक और सॉंस्कृतिक दृष्टि से अग्निपुराण का काफी महत्व है जिसमें राजतन्त्र के साथ–साथ कृषि सम्बन्धी विवरण भी दिया गया है। इस प्रकार पुराणं प्राचीनकाल से लेकर गुप्तकाल के इतिहास से सम्बन्धित अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं का परिचय कराते हैं। छठी शताब्दी ईस्वी पूर्व के पहले के प्राचीन भारतीय इतिहास के पुनर्निर्माण के लिये तो पुराण ही एकमात्र स्रोत है।

धर्मशास्त्र

धर्मसूत्र, स्मृति, भाष्य, निबन्ध आदि को सम्मिलित रूप से धर्मशास्त्र कहा जाता है। आपस्तम्भ, बौद्धायन तथा गौतम के धर्मसूत्र सबसे प्राचीन है। धर्मसूत्रों में ही सर्वप्रथम हम वर्णव्यवस्था का स्पष्ट वर्णन प्राप्त करते हैं तथा चार वर्णों के अलग–अलग कर्तव्यों का भी निर्देश मिलता है। कालान्तर में धर्मसूत्रों का स्थान स्मृतियों ने ग्रहण किया। जहाँ धर्मसूत्र गद्य में है, वहीं स्मृति ग्रन्थ पद्य में लिखे गये हैं। स्मृतियों में मनुस्मृति सबसे प्राचीन तथा प्रामाणिक मानी जाती है। बूलर के अनुसार इसकी रचना

ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से लेकर ईसा की दूसरी शताब्दी के मध्य हुई थी। अन्य स्मृतियों में याज्ञवल्क्य, नारद, बृहस्पति, कात्यायन, देवल आदि की स्मृतियाँ उल्लेखनीय हैं। मूनुस्मृति को शुंग काल का मानक **ग्रंथ** माना जाता है। इसके अध्ययन से शुगकालीन भारत की राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक दशा का बोध होता है। नारद स्मृति गुप्त–युग के विषय में महत्वपूर्ण सूचनायें प्रदान करती है। कालान्तर में इन पर अनेक विद्वानों द्वारा टीकायें लिखी गई मनुस्मृति के प्रमुख टीकाकार भारुचि, मेघातिथि, गोविन्द्रराज तथा कुल्लुक भट्ट है। विश्वरूप, विज्ञानेश्वर तथा अपरार्क, याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रमुख टीकाकार हैं। इन टीकाओं से भी भी हम हिन्दू–समाज के विविध पक्षों के विषयु में अच्छी जानकारी प्राप्त करते हैं

बौद्ध–ग्रन्थ

ब्राह्मणेतर साहित्य

बौद्ध ग्रन्थों में त्रिपिटक सबसे महत्वपूर्ण है। बुद्ध की मृत्यु के बाद उनकी शिक्षाओं को संकलित कर तीन भागों – बाँटा गया। इन्हों को त्रिपिटक कहते हैं। ये हैं–विनयपिटक (संघ सम्बन्धी नियम तथा आचार की शिक्षायें), सुत्तपिटक (धार्मिक सिद्धान्त अथवा धर्मोपदेश) तथा अभिधम्मपिटक (दार्शनिक सिद्धान्त)। इसके अतिरिक्त निकाय तथा जातक आदि भी हमें अनेकानेक ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध होती है। पाली भाषा में लिखे गये बौद्ध ग्रन्थों को प्रथम शताब्दी ईसा का माना जाता है। अभिधम्मपिटक में सर्वप्रथम संस्कृत भाषा का प्रयोग मिलता है। त्रिपिटकों की सबसे बड़ी विशेषता है कि ये बौद्ध संघों के संगठन का पूर्ण विवरण प्रस्तुत करते हैं। निकायों में बौद्ध धर्म के सिद्धान्त तथा कहानियों का वर्णन हैं। जातकों में बुद्ध के पूर्व जन्मों की कहानी है। कुछ जातक ग्रन्थों से बुद्ध के समय की राजनीतिक अवस्था का उल्लेख भी मिलता है। इसके साथ ही साथ ये समाज और सभ्यता के विभिन्न पहलुओं के विषय में महत्वपूर्ण सामग्री करते हैं। दीपवंश तथा महावंश नामक दो पाली ग्रन्थों से मौर्यकालीन इतिहास के विषय में सूचना मिलती है पाली भाषा एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रन्थ नागसेन द्वारा रचित मिलिन्दपण्हो (मिलिन्द–प्रश्न) है जिससे हिन्द–यवन शासक मिनांडर के विषय में सूचनायें मिलती है। इनके अतिरिक्त संस्कृत भाषा में लिखे गये अन्य कई बौद्ध ग्रन्थ भी है जो वौद्ध के दोनों सम्प्रदायों से सम्बन्धित है हीनयान का प्रमुख ग्रन्थ कथावस्तु है जिसमें महात्मा बुद्ध का जीवन चरित कधानकों के साथ वर्णित है। महायान सम्प्रदाय के ग्रन्थ **ललितविस्तार** दिव्यावदान आदि है ललित विस्तार में बुद्ध को ईश्वर मानकर उनके जीवन तथा कार्यों का चमत्कारिक वर्णन प्रस्तुत किया गया है। दिव्यावदान से अशोक के से लेकर पुष्यमित्र शुंग तक के शासकों के विषय में सूचना मिलती है। संस्कृत बौद्ध लेखकों में अश्वघोष – अत्यन्त ऊँचा है।

जैन–ग्रन्थ

जैन साहित्य को आगम (सिद्धान्त) कहा जाता है। जैन साहित्य का दृष्टिकोण भी वौद्ध साहित्य के समान हो धर्मपरक है। जैन ग्रन्थों में परिशिष्टपर्व, भद्रवाहुचरित, आवश्यकसूत्र, आचारांगसूत्र, भगवतीसूत्र, कालिकापुराण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनसे अनेक ऐतिहासिक घटनाओं की सूचना मिलती है। जैन धर्म का प्रारम्भिक इतिहास कल्पसूत्र से ज्ञात होता है **जिसके रचनाकार** भद्रबाहु **थे** परिशिष्टपर्वन तथा महावीर के जीवन, कृत्यों तथा अन्य समकालिकों के साथ उनके सम्बन्धों का बड़ा ही रोचक विवरणं मिलता है। आचारागसूत्र जैन भिक्षुओं के आचार–नियमों का वर्णन करता है। जैन साहित्य में पुराणों का भी महत्वपूर्ण स्थान है जिन्हें चरित भी कहा जाता है। ये प्राकृत, संस्कृत तथा अपभ्रंश, तीनों भाषाओं में लिखे गये हैं। इनमें

पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, आदिपुराण इत्यादि उल्लेखनीय है। जैन पुराणों का समय छठी शताब्दी से सोलहवों–सत्रहवीं शताब्दी तक निर्धारित किया गया है। यद्यपि इनमें मुख्यतः कथायें दी गयी है तथापि इनके अध्ययन से विभिन्न कालों की राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक दशा का थोड़ा बहुत ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

लौकिक साहित्य लौकिक साहित्य के अन्तर्गत ऐतिहासिक एवं अर्द्ध ऐतिहासिक ग्रन्थों तथा जीवनियों का विशेष रूप से उल्लेख कियाजा सकता है जिनसे भारतीय इतिहास जानने में काफी मदद मिलती है। ऐतिहासिक रचनाओं में सर्वप्रथम उल्लेख अर्थशास्त्र का किया जा सकता है जिसकी रचना चन्द्रगुप्त मौर्य क`प्रधानमन्त्री सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ कौटिल्य (चाणक्य) ने की थी। मौर्यकालीन इतिहास एवं राजनीति के ज्ञान के लिये यह ग्रन्थ एक प्रमुख स्रोत है। इससे चन्द्रगुप्त मौर्य की शासन–व्यवस्था पर प्रचुर प्रकाश पड़ता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनेक सिद्धान्तों को सातवी–आठवीं शताब्दी ईस्वी में कामन्दक ने अपने नीतिसार में संकलित किया। इस संग्रह में दसवीं शताब्दी ईस्वी के राजत्व सिद्धान्त तथा राजा के कर्तव्यों पर प्रकाश पड़ता है। ऐतिहासिक रचनाओं में सर्वाधिक महत्व कश्मीरी कवि कल्हण द्वारा रचित राजतरंगिणी का है। यह संस्कृ त साहित्य में ऐतिहासिक घटनाओं के क्रमबद्ध इतिहास लिखने का प्रथुम प्रयास है। इसमें आदिकाल से लेकर 1151 ई0 के आरम्भ तक के कश्मीर के प्रत्येक शासक के काल की घटनाओं का क्रमानुसार विवरण दिया गया है। कश्मीर की ही भौति गुजरात से भी अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थ प्राप्त होते है जिनमें सोमेश्वर कुत रसमाला तथा कीर्तिकौमुद्री, मेरुतंग कृत प्रबन्धचिन्तामणि, राजशेखर कृत प्रबन्धकोश आदि उल्लेखनीय हैं। इनसे हमें गुजरात के चौलुक्य वंश का इतिहास तथा उसके समय की संस्कृति का अच्छा ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

इसी प्रकार सिंन्ध तथा नेपाल से भी कुई इतिवृत्तियां मिलती है जिनसे वहाँ का इतिहास ज्ञात होता है। सिन्ध को इतिवृत्तियों के आधार पर ही चचनांमाष नामक ग्रन्थ की रचना की गयी जिसमें अरबों की सिन्ध विजय का वृत्तान्त सुरक्षित है। मूलतः यह अरबी भाषा में लिखा गया तथा कालान्तर में इसका अनुवाद खुफी के द्वारा फारसी भाषा में किया गया। अरब आक्रमण के समय सिन्ध की दशा का अध्ययन करने के लिये यह सर्वप्रमुख ग्रन्थ है। नेपाल की वंशावलियां में वहाँ के शासकों का नामोल्लेख प्राप्त होता है, किन्तु उनमें से अधिकांश अनैतिहासिक हैं।

अर्द्ध–ऐतिहासिक रचनाओं में पाणिनि की अष्टाध्यायी, कात्यायन का वार्त्तिक, गार्गीसंहिता, पतंजलि का महाभाष्य, विशाखदत्त का मुद्राराक्षस तथा कालिदासकृत मालविकाग्निमित्र आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पाणिनि तथा कात्यायन के व्याकरण–ग्रन्थों से मौर्यों के पहले के इतिहास तथा मौर्ययुगीन राजनीतिक अवस्था परः प्रकाश पड़ता है। पाणिनि ने सूत्रों को समझाने के लिए जो उदाहरण दिये है उनका उपयोग सामाजिक–आर्थिक दशा के ज्ञान के लिये भी किया जा सकता है। इससे उत्तर भारत के भूगोल की भी जानकारी होती है। गार्गीसंहिता, यद्यपि एक ज्योतिष ग्रन्ध है तथापि इससे कुछ ऐतिहासिक घटनाओं की सूचना मिलती है। इसमें भारत पर होने वाले यवन, आक्रमण का उल्लेख मिलता है जिससे हमें पता चलता है कि यवनों ने साकेत, पंचाल, मथुरा तथा कुसुमध्वज (पाटलिपुत्र) पर आक्रमण किया था। पतंजलि पुष्यमित्र शंग के पुरोहित थे। उनके महाभाष्य से शुंगों के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है। मुद्राराक्षस से चन्द्रगुप्त मौर्य के विषय में सूचना मिलती है। कालिदास कृत मालविकाग्निमित्र नाटक शुंगकालीन राजनीतिक परिस्थितियों का विवरण प्रस्तुत करता है।

ऐतिहासिक जीवनियों में अश्वघोषकृत बुद्धचरित, बाणभट्ट का हर्षचरित, वाक्पति का गौडवहो, विल्हण ने विक्रमाङ्कदेवचरित, पद्मगुप्त का नवसाहसाङ्क चरित, सन्ध्याकर नन्दी कृत रामचरित, हेमचन्द्र कृत कुमारपालचरित (द्वयाश्रयकाव्य), जयानक कृत पृथ्वीराजविजय आदि का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है।

चीनी–लेखक

प्राचीन भारतीय इतिहास के पुनर्निर्माण में चीनी यात्रियों के विवरण भी विशेष उपयोगी रहे हैं। ये चीनी यात्री बौद्ध मतानुयायी थे तथा भारत में बौद्ध तीर्थस्थानों की यात्रा तथा वौद्ध धर्म के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिये आये थे। वे भारत का उल्लेख **यिन्तु** नाम से करते हैं। इनमें तीन नाम विशेष रूप से प्रसिद्ध है– फाहियान, सुगयुन, हेनसांग ! फाहियान चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य (375–415 ई०) के दरबार में आया था। उसने अपने विवरण **मध्यदेश** के समाज एवं संस्कृति का वर्णन किया है। वह मध्यदेश की जनता को सुखी एवं समृद्ध बताता है। संगयुन 518 ई० में भारत में आया और उसने अपने तीन वर्ष की यात्रा में बौद्ध ग्रन्थों की प्रतियों एकत्रित की। चीनी यात्रियों में सर्वाधिक महत्व हेनसांग **अथवा** युवानच्वांग का ही है जो महाराज हर्षवर्द्धन के शासन काल में (629 ई० का लगभग) यहाँ आया था। उसने वर्षों तक यहाँ निवास कर विभिन्न स्थानों की यात्रा को तथा नालन्दा विश्वविद्यालय में 6 वर्षों तक रहकर शिक्षा प्राप्त की। उसका भ्रमण वृत्तान्त सि–यू–की नाम से प्रसिद्ध है जिसमें 138 देशों का विवरण मिलता है। इससे हर्षकालीन भारत के समाज, घर्म तथा राजनीति पर सुन्दर प्रकाश पड़ता है। उसके मित्र हीली ने **हेनसांग की जीवनी** लिखी है जो हर्षकालीन भारत की दशा के ज्ञान के लिये एक प्रमुख स्रोत है। भारतीय संस्कृति के इतिहास में हुएनसांग ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अन्य चीनी लेखकों में मात्वान लिन तथा चाऊ–जू–कूआ का उल्लेख किया जा सकता है। मा त्वान लिन के विवरण से हर्ष के पूर्वी अभियान के विषय में कुछ सूचना मिलती है। चाऊ जू–कुआ चोल इतिहास के विषय में कुछ तथ्य प्रस्तुत करता है।

अरबी लेखक

अरब व्यापारियों तथा लेखकों के विवरण से हमें पूर्वमध्यकालीन भारत के समाज एवं संस्कृति के विषय में जानकारी होती है। ऐसे लेखकों में अल्बरूनी का नाम सर्वप्रसिद्ध है। उसका जन्म 973 ई० में ख्वारिज्म (खौवा) में हुआ था। उसका पूरा नाम अबूरेहान महम्मद इब्न अहमद अल्बरूनी था। प्रारम्भ में उसने साहित्य तथा विज्ञान का अध्ययन किया एवं इन विद्याओं में निपुणता हासिल की। उसकी विद्वता से प्रभावित होकर ख्वारिज्म के ममूनी शासक ने उसे अपना मन्त्री नियुक्त कर दिया। 1017 ई० में गजनी के सुल्तान महमूद ने ख्वारिज्म पर आक्रमण किया तथा उसे जीत लिया। अनेकों लोग बन्दी बनाये गये जिनमें अल्वरूनी भी एक था। महमूद उसकी योग्यता से अत्यन्त प्रभावित हुआ तथा उसने उसे राजज्योतिषों के पद पर नियुक्त कर दिया। भारतीय तथा यूनानी दोनों ही पद्धतियों से उसने ज्योतिष का अध्ययन किया तथा निपुणता प्राप्त की। गणित, विज्ञान एवं ज्योतिष के साथ ही साथ अल्वरूनी अरवी, फारसी एवं संस्कृत भाषाओं का भी अच्छा ज्ञाता था। वह महमूद गजनवी के साथ भारत आया था। किन्तु उसका दृष्टिकोण महमूद से पूर्णतया भिन्न था और वह भारतीयों का निन्दक न होकर उनकी वौद्धिक सफलताओं का महान् प्रशंसक था। भारतीय संस्कृति के अध्ययन में उसकी गहरी दिलचस्पी थी तथा गीता से वह विशेष रूप से प्रभावित हुआ। भारतीयों के दर्शन, ज्योतिष एवं विज्ञान सम्वन्धी ज्ञान की वह प्रशंसा करता है। अल्वरूनी सत्य का हिमायतों तथा अपने विचारों का पक्का था। उसने भारतीयों से जो कुछ सुना उसी के आधार पर उनकी सभ्यता का विवरण प्रस्तुत कर दिया। अपनी पुस्तक तहकीक–ए–हिन्द (भारत की खोज) में उसने यहाँ के निवासियों की दशा का वर्णन किया है। इससे राजपूतकालीन समाज, धर्म, रीति–रिवाज, राजनीति आदि पर सुन्दर प्रकाश पड़ता है। ज्ञात होता है कि उसके समय में ब्राहाण धर्म का बोल–वाला था तथा बौद्ध धर्म का अस्तित्व समाप्त हो गया था। अपने विवरण में वह बौद्ध धर्म का बहुत कम उल्लेख करता है। हिन्दू समाज में प्रचलित वर्णव्यवस्था का उल्लेख भी वह करता है तथा बताता है कि ब्राह्मणों को समाज में सबसे अधिक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था। पैशावर स्थित कनिष्क विहार का भी वह विवरण देता है।

अल्वरूनी का विवरण चीनी यात्रियों के विवरण की तरह उपयोगी नहीं है क्योंकि उसे भारत में भ्रमण करने का बहुत कम अवसर प्राप्त हुआ। उसके समय में बनारस तथा कश्मीर शिक्षा के प्रमुख केन्द्र थे किन्तु वह इन स्थानों में भी नहीं जा सका। अल्वरूनी के अतिरिक्त अल–बिलादुरी, सुलेमान, अल मसऊदी, हसन निजाम, फरिश्ता, निजामुद्दीन आदि मुसलमान लेखक भी हैं जिनकी कृतियों से भारतीय इतिहास–विषयक महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। इब्नखर्ददव (नवीं शती) के ग्रन्थ शकिलवल–मसालिक वत ममालिकश में भारतीय समाज तथा व्यापारिक मार्गो का विवरण दिया गया है। अबूजेद ने भारत में सामाजिक एवं सांस्कृतिक जौवन का वर्णन किया है

शेख अब्दुल हसन कृत कमिल–उत तवारीख से मुहम्मद गोरी के भारतीय विजय का वृत्तान्त ज्ञात होता है। मिनहासुद्दीन के तबकात–ए–नासिरी में भी मुहम्मद गोरी की हिन्दुस्तान विजय का प्रामाणिक विवरण सुरक्षित है।

उपर्युक्त लेखकों के अतिरिक्त तिब्वती बौद्ध लेखक तारानाथ (12वीं शतीं) के ग्रन्थों– कंम्बर तथा तंग्युर से भी भारतीय इतिहास की कुछ बातें ज्ञात होती है। किन्तु उसके विवरण ऐतिहासिक नहीं लगते। वेनिस का प्रसिद्ध यात्री मार्कोप्ल्ली तेरहवी शती के अन्त में पाण्ड्य देश की यात्रा पर आया था। उसका वृत्तान्त पाण्ड्य इतिहास के अध्ययन के लिये उपयोगी है।

पुरातत्व सम्बन्धी साक्ष्य

पुरातत्व वह विज्ञान है जिसके माध्यम से पृथ्वी के गर्भ में छिपी हुई सामग्रियों की खुदाई कर प्राचीन काल के लोगों के भौतिक जोवन का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। प्राचीन इतिहास के ज्ञान के लिये पुरातात्विक प्रमाणों से बहुत अधिक सहायता मिलती है। ये साधन अत्यन्त प्रामाणिक है तथा इनसे भारतीय इतिहास के अनेक अन्ध–युगों (Dark-Ages) पर प्रकाश पड़ता है। जहाँ साहित्यिक साक्ष्य मौन है वहाँ हमारी सहायता पुरातात्विक साक्ष्य करते है।

पुरातत्व के अन्तर्गत तीन प्रकार के साक्ष्य आते हैं–

(अ) अभिलेख

(आ) मुद्रा

(इ) स्मारक

इनका विस्तृत विवरण इस प्रकार है–

अभिलेख

प्राचीन इतिहास के पुनर्निर्माण में अभिलेखों से बड़ी मदद मिली है। अभिलेखों का ऐतिहासिक महत्व साहित्यिक साक्ष्यों से अधिक है। ये अभिलेख पाषाण शिलाओं, स्तम्भों, ताम्रपत्रों, दीवारों, मुद्राओं एवं प्रतिमाओं आदि पर खुदे हुये

मिले हैं। सबसे प्राचीन अभिलेखों में मध्य एशिया के बोगाजकोई से प्राप्त अभिलेख है। यह हित्ती नरेश सप्पिलुत्युमा तथा मितन्नी नरेश मतिवजा के बीच सन्धि का उल्लेख करता है जिसके साक्षी के रूप में वैदिक देवता मित्र, वरुण, इन्द्र और नासत्य (अश्विनी कुमार) के नाम मिलते हैं। यह लगभग 1400 ई० पू० के हैं तथा इनसे ऋग्वेद की तिथि ज्ञात करने में सहायता मिलती है। पारसीक नरेशों के अभिलेख हमें पश्चिमोत्तर भारत में ईरानी साम्राज्य के विस्तार की सूचना देते हैं। परन्तु अपने यधार्थ रूप में अभिलेख हमें अशोक के शासन काल से ही मिलने लगे हैं। अशोक के अनेक शिलालेख एवं

स्तम्भ–लेख देश के विभिन्न स्थानों से प्राप्त होते हैं। अभिलेखों से अशोक के साम्राज्य की सीमा, उसके धर्म तथा शासन नीति पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है। देवदत्त रामकृष्ण भण्डारकर जैसे एक चोटी के विद्वान् ने केवल अभिलेखों के आधार पर ही अशोक का इतिहास लिखने का सफल प्रयास किया है।

अशोक के बाद भी अभिलेखों की परम्परा कायम रही। अब हमें अनेक प्रशस्तियाँ मिलने लगती है जिनमें दरबारी कवियों अथवा लेखकों द्वारा अपने आश्रयदाताओं की प्रशंसा के शब्द मिलते है। यद्यपि ये प्रशस्तियी अतिरंजित है तथापि ऐसे इनसे सम्बन्धित शासकों के विषय में हमें अनेक महत्वपूर्ण बातें ज्ञात होती हैं। ऐसे लेखों में खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख, शकक्षत्रप रुद्रदामन का जूनागढ़ अभिलेख, सातवाहन नरेश पुलुमावी का नासिक गुहालेख, गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त का प्रयाग स्तम्भ–लेख, मालवनरेश यशोधर्मन् का मन्दसोर अभिलेख, चालुक्यनरेश पुलकेशिन् द्वितीय का ऐहोल का अभिलेख, प्रतिहारनरेश भोज का ग्वालियर अभिलेख आदि विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इनमें से अधिकांश लेखों से तत्सम्बंधों राजाओं के सैनिक अभियानों की सूचना मिलती है। जैसे, समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तम्भ–लेख में उसकी विजयों का विशद विवरण है। ऐहोल का लेख हर्ष–पुलकेशिन् युद्ध का विवरण देता है। ग्वालियर लेख से गुर्जर प्रतिहार शासकों के विषय में विस्तृत सूचनायें प्राप्त होती है। गैर–सरकारी लेखों में पढ़न राजदूत हेलियाडोरस का वेसनगर (विदिशा) से प्राप्त होने का प्रमाण मिलता है। कुछ अभिलेख मूर्तियों, ताम्रपत्रों आदि के ऊपर अंकित मिलते है। इनसे भी इतिहास विषयक अनेक उपयोगी सामग्रियाँ प्राप्त हो जाती है। मध्यप्रदेश के एरण से प्राप्त वाराह प्रतिमा पर तोरमाण का लेख अंकित है जिससे उसके विषय में सूचनायें मिलती है। पूर्व मध्यकाल में शासन करने वाले राजपूतों के विभिन्न राजवंशों में से प्रत्येक के कई लेख मिलते हैं जिनसे संबंधित राजाओं की उपलब्धियों के साथ–साथ समाज एवं संस्कृति की भी जानकारी होती है। इनमें गुर्जर प्रतिहार वंश की जोधपुर तथा ग्वालियर प्रशस्ति, पालवंश का खालीमपुर, नालन्दा तथा भागलपुर के लेख, सेनवंशी विजय सेन की देवपाड़ा प्रशस्ति, गहड़वाल शासक गोविन्दचन्द्र का कमौली लेख, परमार भोजदेव का वंसवर लेख तथा जयसिंह की उदयपुर प्रशस्ति, चन्देल धंग का खजुराहो लेख, चेदि कर्ण का बनारस तथा यशःकर्ण का जबलपुर ताम्रपत्र लेख, चाहमान विग्रहराज का दिल्ली शिवालिक स्तम्भ लेख आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। राजपूत शासकों के अधीन सामन्तों के भी बहुसंख्यक लेख मिलते हैं। पूर्व मध्य काल के बहुसंख्यक भूमि अनुदान–पत्र (स्ंदक ळतंदजे) मिलतें हैं जिनसे प्रशासन के सामन्ती स्वरूप की सूचना मिलती है। दक्षिण भारत में शासन करने वाले पल्लव, चोल आदि प्रसिद्ध राजवंशों के भी अनेक लेख प्राप्त हुए हैं जिनसे उनके इतिहास की विस्तृत जानकारी मिलती है।

मुद्रायें अथवा सिक्के

अभिलेखों के अतिरिक्त प्राचीन राजाओं द्वारा ढलवाये गये सिक्कों से भी प्रचुर ऐतिहासिक सामग्री उपलब्ध होती है। यद्यपि भारत में सिक्कों की प्राचीनता आठवीं शती ईसा पूर्व तक जाती है तथापि ईसा पूर्व छठीं शताब्दी से ही हमें नियमित सिक्के मिलने लगते हैं। प्राचीनतम सिक्कों को आहत सिक्के कहा जाता है। इन्हीं को साहित्य में कार्षापण, पण, धरण , शतमान आदि भी कहा गया है। ये अधिकांशतः **चांदी** के टुकड़े है जिनपर विविध आकृतियाँ चिह्नित की गयी है। इन पर लेख नहीं मिलते। सर्वप्रथम सिक्कों पर लेख लिखवाने का कार्य यवन शासकों ने किया। उन्होंने उत्तर में सोने के सिक्के चलवाये। साधारणतया 206 ई० पू० से लेकर 300 ई0 तक के भारतीय इतिहास का ज्ञान हमें मुख्य रूप से मुद्राओं की सहायता से ही होता है। कुछ मुद्राओं पर तिथियों भी खुदी हुई हैं जो कालक्रम के निर्धारण में बड़ी सहायक हुई है। मुद्राओं से तत्कालीन आर्थिक दशा तथा सम्बन्धित राजाओं की साम्राज्य सीमा का भी ज्ञान हो जाता है। किसी काल में सिक्कों की बहुलता को देखकर हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि उसमें व्यापार–वाणिज्य अत्यन्त विकसित दशा में था। सिक्कों की कमी को

व्यापार–वाणिज्य की अवनति का सूचक माना जा सकता है। पूर्व मध्य काल के प्रथम चरण में सिक्कों का अभाव सा है। इसी आधार पर यह काल आर्थिक पतन का काल माना गया है। इसके विपरीत द्वितीय चरण में सिक्कों के मिल जाने से हम निष्कर्ष निकालते है कि इस समय व्यापार–वाणिज्य का पुनरुत्थान हुआ, जिससे देश आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हो गया। प्राचीन भारत के गणराज्यों का अस्तित्व मुद्राओं से ही प्रमाणित होता है। मालव, यौधेय आदि गणराज्यों तथा पांचाल के मित्रवंशी शासकों के विषय में हम मुख्यतः सिक्कों से ज्ञान प्राप्त करते हैं। कभी–कभी मुद्रा के अध्ययन से हमें सम्राटों के धर्म तथा उनके व्यक्तिगत गुणों का पता लग जाता है।

उदाहरणार्थ हम कनिष्क तथा समुद्रगुप्त की मुद्राओं को ले सकते है। कनिष्क के सिक्कों से यह पता चलता है कि वह बौद्ध धर्म का अनुयायी था। समुद्रगुप्त अपनी कुछ मुद्राओं पर वीणा बजाते हुए दिखाया गया है। इससे उसका संगीत प्रेम प्रकट होता है। भारत के इण्डों बख्त्री शासकों के विषय में हमें उनके सिक्कों से ही ज्ञात होता है। इण्डो–यूनानी तथा इण्डो–सीथियन शासकों के इतिहास के प्रमुख स्रोत सिक्के ही है। शकपह्लव युग की मुद्राओं से उनकी शासन पद्धति का ज्ञान होता है। इनके लेखों से पता चलता है कि पहव राजा अपने गवर्नर के साथ शासन करते थे। समुद्रगुप्त तथा कुमारगुप्त की अश्वमेध शैली की मुद्राओं से अश्व–मेध यज्ञ को सूचना मिलती है। सातवाहन नरेश शातकर्णि की एक मुद्रा पर जलपोत का चित्र उत्कीर्ण है जिससे ऐसा अनुमान लगाया गया है कि उसने समुद्र–विजय की थी। इसी प्रकार चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य की व्याघ्रशैली को मुद्राओं से उसकी पश्चिम भारत (गुजरात–काठियावाड़) के शकों की विजय सूचित होती है।

स्मारक

इसके अन्तर्गत प्राचीन इमारतें, मन्दिर, मूर्तियाँ आदि आती हैं। इनसे विभिन्न युगों को सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक परिस्थितियों का बोध होता है। इनके अध्ययन से भारतीय कला के विकास का भी ज्ञान प्राप्त होता है। मन्दिर, विहारों तथा स्तूपों से जनता की आध्यात्मिकता तथा धर्मनिष्ठा का पता चलता है। हड़प्पा और मोहेनजोदड़ों की खुदाइयों से पाँच सहस्र वर्ष पुरानी सैंधव सभ्यता का पता चला है। खुदाई के अन्य प्रमुख स्थल तक्षशिला, मथुरा, सारनाथ, पाटलिपुत्र, नालन्दा, राजगृह, सांची और भरहुत आदि है। प्रयाग विश्वविद्यालय के तत्वावधान में कौशाम्बी में व्यापक पैमाने पर खुदाई की गयी है। यहाँ से उदयन का राजप्रसाद एवं घोषिताराम नामक एक विहार मिला है। भारतीय इतिहास के स्रोतों का विश्लेषणात्मक अध्ययन भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। परन्तु दुर्भाग्यवश हमें अपने प्राचीन इतिहास के पुनर्निर्माण के लिये उपयोगी सामग्री बहुत कम मिलती है। प्राचीन भारतीय साहित्य में ऐसे ग्रन्थों का प्रायः अभाव–सा है जिन्हें आधुनिक परिभाषा में इतिहास की संज्ञा दी जाती है। यह भी सत्य है कि हमारे यहाँ हेरोडोटस, अथवा लिवी जैसे इतिहास–लेखक नहीं उत्पन्न हुए जैसा कि यूनान, रोम आदि देशों में हुए। कतिपय पाश्चात्य विद्वानों ने यह आरोपित किया कि प्राचीन भारतीयों में इतिहास–बुद्धि का अभाव था। लोएस डिकिंग्सन के अनुसार हिन्दू इतिहासकार नहीं थे। भारत में मनुष्य प्रकृति के समक्ष अपने को तुच्छ और असमर्थ पाते है। फलस्वरूप उसमें नगण्यता तथा जीवन को निस्सारता जन्म लेती है, उसे जीवन की अनुभूति एक भयानक दुःस्वप्न के रूप में होती है और दुःस्वप्न का कोई इतिहास नहीं होता है। विन्टर की मान्यता है कि भारतीयों ने मिथक, आध्यान तथा इतिहास में कभी भी स्पष्ट विभेद नहीं किया और भारत में इतिहास रचना काव्य रचना से ऊपर नहीं उठ सकी। मैकडॉनल्ड के अनुसार भारतीय साहित्य का दुर्बल पक्ष इतिहास है जिसका यहाँ अस्तित्व ही नहीं था। इसी विचारधारा का समर्थन एलफिन्स्टन, फ्लीट, मैक्समूलर, बी. ए. स्मिथ जैसे विद्वानों ने भी किया है। 11वीं शती के मुस्लिम लेखक अल्वरुनी इससे मिलता–जुलता विचार व्यक्त करते हुए लिखता है– हिन्दू लोग घटनाओं के ऐतिहासिक क्रम की ओर बहुत अधिक ध्यान नहीं देते। घटनाओं के तिधिक्रमानुसार वर्णन करने में वे बड़ी लापरवाही बरतते है।

संदर्भ ग्रंथ –

1. प्राचीन भारत का इतिहास. के. सी श्रीवास्तव, यूनाईटेड बुक डिपो 2018
2. प्राचीन भारत का इतिहास. झा एवं श्रीमालीए हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय 2016
3. प्राचीन भारत का इतिहास. रोमिला थापर, ग्रन्थ शिल्पी इण्डिया प्राईवेट लिमिटेड 2001
4. प्राचीन भारत का इतिहासए पप्पू सिंह प्रजापत, रॉयल पब्लिकेशन 2021
5. प्राचीन भारत का इतिहास. एस. के. पांडे, प्रयाग पब्लिकेशन 2014